7.1 प्रस्तावना

प्रयोगात्मक अनुसन्धान प्रश्नों का व्यवस्थित, वस्तुनिष्ठ एवं तार्किक दृष्टि से उत्तर प्राप्त करने का वह प्रयास है जिससे यह पता लग सके कि X चर में सावधानीपूर्वक नियन्त्रित परिस्थिति के संदर्भ में हेर–फेर लाया जाए तो चर Y पर क्या प्रभाव पड़ेगा। इस विधि को प्रायोगिक विधि के नाम से भी पुकारा जा सकता है। इसके अन्तर्गत दो चर निहित होते है। एक चर को निराश्रित चर अर्थात 'X' कहा जाता है जिससे उसमें शोधकर्ता हेर–फेर लाने के लिए स्वतन्त्र होता है, दूसरे चर को आश्रित चर अर्थात 'Y' कहा जाता है। जिसके जरिए निराश्रित चर में हेरफेर के प्रभाव का प्रेक्षण एवं मापन किया जाता है। यह सुनिश्चित करने के लिए चर X के अतिरिक्त अन्य कोई चर Y पर पड़े प्रभाव को दूषित न कर पाये तथा पूरी परिस्थिति को पर्याप्त नियन्त्रण में रखा जाता है। इस इकाई में प्रायोगिक अनुसन्धान विधि की प्रक्रिया, विशेषताओं, अभिकल्प एवं अभिकल्पों के प्रकारों का वर्णन किया गया है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप–

1. प्रयोगात्मक अनुसन्धान का अर्थ, चर एवं उनके प्रकारों के विषय में जान सकेंगे।
2. प्रयोगात्मक अनुसन्धान की विशेषताएं को समझ सकेंगे।
3. प्रयोगात्मक अभिकल्प के बारे में बता सकेंगे।
4. एक अच्छे प्रायोगिक अभिकल्प की कसौटी से अवगत हो सकेंगे।
5. प्रायोगिक अभिकल्प के प्रकार को जान सकेंगे।

7.3 प्रयोगात्मक अनुसन्धान

प्रयोगात्मक अनुसन्धान, अनुसन्धान की एक प्रमुख विधि है। प्रयोगात्मक अनुसन्धान में कार्य कारण सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। कार्य–कारण सम्बन्ध स्थापित करने के लिये दो स्थितियों को संतुष्ट करना होता है। पहले तो यह सिद्ध करना होता है कि यदि कारण है तो उसका प्रभाव होगा। यह स्थिति आवश्यक है लेकिन पर्याप्त नहीं है। दूसरा हमें यह भी सिद्ध करना होता हैकि यदि कारण नहीं है तो प्रभाव भी नहीं होगा। यदि यही कारण न हो फिर भी प्रभाव हो तो इसका अर्थ यह हुआ कि प्रभाव का वह कारण नहीं है जो हम अपेक्षा कर रहे थे। प्रयोगात्मक अनुसन्धान में कारण की उपस्थिति प्रभाव को दिखाती है तथा कारण की अनुपस्थिति प्रभाव को नही दिखाती है। इन्ही दो स्थितियों को सन्तुष्ट करने के बाद हम सही कार्य–कारण सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं ।

प्रयोगात्मक अनुसन्धान, जान स्टुआर्ट के "एकल चर के नियम" (Law of Single Variable) पर आधारित है। प्रयोगात्मक अनुसन्धान का आधार

"अन्तर की विधि (Method of Difference) है। इस विधि के अनुसार –

" यदि दो परिस्थितियां सभी दृष्टियों से समान है तथा यदि किसी चर को एक परिस्थिति में जोड़ दिया जाए तथा दूसरी स्थिति में नहीं जोड़ा जाए और यदि पहली परिस्थिति में कोई परिवर्तन दिखाई पड़े तो वह परिवर्तन उस चर के जोड़ने के कारण होगा। यदि किसी एक परिस्थिति में एक चर हटा लिया तथा दूसरी परिस्थिति में उस चर को न हटाए तब यदि पहली परिस्थिति में कोई परिवर्तन होगा तो वह उस चर के हटा लेने के कारण होगा।"

चर – प्रयोगात्मक अनुसन्धान में निम्नलिखित चरों का वर्णन किया जाता है–

7.3.1 स्वतन्त्र चर (Independent Variable) –

जिस चर में प्रयोगकर्ता परिवर्तन या जोड़–तोड़ करता है, उसे स्वतन्त्र चर कहा जाता है। स्वतन्त्र चर को 'कारण चर' (cause variable) भी कहा जाता है। इसे 'प्रभावित करने वाला चर' (Influencing variable) कहा जाता है क्योंकि यह किसी दूसरे चर को प्रभावित करता है।

उदाहरण – पढ़ाने का तरीका, बुद्धि, अभिवृत्ति, व्यक्तित्व, प्रेरणा, आयु ।

स्वतन्त्र चर दो प्रकार के होते हैं –

1. संचालित चर (Treatment variable)
2. जैविक चर (organismic variable)

जिन चरों में शोधकर्ता द्वारा जोड़–तोड़ करना सम्भव होता है उसे संचालित चर कहते हैं, जैसे – पढ़ाने का तरीका, दण्ड, पुरस्कार आदि।

जिन चरों में शोधकर्ता द्वारा परिवर्तन सम्भव नहीं होता है उन्हें जैविक चर कहते हैं जैसे –बुद्धि, प्रजाति, आयु आदि।

7.3.2 आश्रित चर (Dependent Variable) –

स्वतन्त्र चर में जोड़–तोड़ के बाद उसका प्रभाव जिस चर पर देखा जाता है उसे आश्रित चर कहा जाता है। इसी कारण आश्रित चर को 'प्रभाव चर' (Effect Variable) कहा जाता है। आश्रित चर के अवलोकन के बाद उसकी रिकार्डिंग शोधकर्ता द्वारा की जाती है।

यदि पढ़ाने की विधि के प्रभाव का अध्ययन हम शैक्षिक उपस्थित पर करना चाहते हैं तथा दो या तीन भिन्न–भिन्न विधियों से बच्चों को पढ़ाया जाए तथा इसका प्रभाव उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर देखा जाए तो इस अध्ययन में 'पढ़ाने की विधि' एक स्वतन्त्र चर है तथा 'शैक्षिक उपलब्धि' एक आश्रित चर है।

7.3.3 समाकलित चर (Confounding Variable) –

किसी भी अध्ययन में स्वतन्त्र चर के अतिरिक्त ऐसे कुछ चर होते हैं तो आश्रित चर को प्रभावित करते हैं। स्वतन्त्र चर का प्रभाव हमें आश्रित चर पर

देखना होता है। चयनित स्वतन्त्र चर के अतिरिक्त सभी चर भी आश्रित चर को प्रभावित कर सकते हैं। इन चरों को समाकलित चर कहा जाता है। समाकलित चर दो प्रकार के होते हैं –

क. हस्तक्षेपी चर (Intervening Variable) – कुछ चर ऐसे होते हैं जिन्हें हम सीधे नियंत्रित नहीं कर सकते और न ही उनका मापन कर सकते हैं लेकिन उनकी उपस्थिति का आश्रित चर पर प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार के चरों का उदाहरण –दुश्चिन्ता, प्रेरणा तथा थकान आदि है। इन चरों का अवलोकन तथा संक्रियात्मक परिभाषीकरण करना भी मुश्किल होता है लेकिन इनको अनदेखा नहीं किया जा सकता। उपयुक्त शोध–डिजाइन के प्रयोग द्वारा इन्हें हम नियन्त्रित कर सकते हैं।

ख. वाह्य चर (Extraneous Variable) – स्वतन्त्र चर का प्रभाव हम आश्रित चर पर देखते हैं। ऐसे चर जिनका अध्ययन हमे नहीं करना होता या शोध कर्ता जिनमें कोई जोड़–तोड़ नहीं करना उनका प्रभाव भी आश्रित चर पर पड़ता है। इसलिये ऐसे चरों को नियन्त्रित करना आवश्यक होता है। इन्हे ही वाह्य चर कहते हैं। वाह्य चरों पर नियन्त्रण कई विधियों से किया जाता है। वाहय चर अध्ययन के परिणाम को प्रभावित करते हैं तथा यह स्वतन्त्र चर तथा आश्रित चर दोनो से सहसम्बन्धित होते हैं।

स्वतन्त्र चर – अध्यापक

आश्रित चर – परीक्षा परिणाम

वाहय चर – विद्यालय का वातावरण

7.3.4 प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह (Experimental Group and Control Group) –

कार्य–कारण सम्बन्धों को स्थापित करने के लिये हमें दो पारिस्थितियों को संतुष्ट करना होता है। पहली परिस्थिति मे में यह देखना होता है यदि कारण है तो प्रभाव होगा तथा दूसरी परिस्थिति में हमें यह देखना होता है कि यदि कारण नहीं है तो प्रभाव भी नहीं होगा। इसी कारण प्रयोगात्मक अनुसन्धान में दो समूह होते हैं – एक प्रयोगात्मक समूह तथा दूसरा नियन्त्रित समूह।

प्रयोगात्मक समूह – इस समूह में शोधकर्ता द्वारा स्वतन्त्र चर में जोड़–तोड़ किया जाता है। यह सिद्ध किया जाता है कि यदि कारण है तो इसका प्रभाव होगा। जोड़–तोड़ का प्रभाव आश्रित चर पर देखा जाता है।

नियन्त्रित समूह – इस समूह में शोधकर्ता द्वारा स्वतन्त्र चर में कोई जोड़–तोड़ नहीं किया जाता है। यह सिद्ध किया जाता है कि यदि कारण नहीं है तो इसका प्रभाव भी नहीं है।

7.4 प्रयोगात्मक अनुसन्धान की विशेषताएं :

प्रयोगात्मक अनुसन्धान की चार प्रमुख विशेषताएं होती है ।

1. नियन्त्रण (Control)
2. जोड़–तोड़ (Manipulation)
3. अवलोकन (Observation)
4. पुनरावृत्ति (Replication)

7.4.1 नियन्त्रण (Control) :–

नियन्त्रण प्रयोगात्मक अनुसन्धान की एक प्रमुख विशेषता है। प्रयोगात्मक अनुसन्धान में हमें स्वतन्त्र चर का प्रभाव आश्रित चर पर देखना होता है। विश्वसनीय परिणाम पाने के लिये वाहय चरों का नियन्त्रण अतिआवश्यक होता है। नियन्त्रण कई विधियो से किया जा सकता है।

(क) विलोपन (Elimination) :– वाहय चरों को नियन्त्रित करने का सबसे आसान तरीका है कि इन चरो को अध्ययन से निष्कासित कर दिया जाए ताकि आश्रित चर पर उसके प्रभाव को विलोपित किया जा सके। यदि बुद्धि वाहय चर है तो दोनों समूहों में समान बुद्धिलब्धि (IQ) के प्रयोज्यों को रखकर इस चर को नियन्त्रित किया जा सकता है। यदि आयु वाहय चर है तो एक समान आयु के प्रयोज्यों पर अध्ययन करके आयु को नियन्त्रित किया जा सकता है। परन्तु इस विधि से नियन्त्रण करने के बाद अध्ययन का सामान्यीकरण केवल उन प्रयोज्यों पर ही किया जा सकता है जिनको अध्ययन में शामिल किया गया है। अध्ययन के परिणाम में हम उसी आयु वर्ग में सामान्यीकृत किया जा सकेगा।

(ख) यादृच्छिकीकरण (Randomization) :– यादृच्छिकीकरण केवल एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा सभी वाहय चरों समूह तथा नियन्त्रित समूह असमतुल्य हो सकते है लेकिन फिर भी उनके समान होने की प्रायिकता बहुत अधिक होती है। जहां तक सम्भव हो प्रयोगात्मक समूह में यादृच्छिक ढ़ंग से प्रयोज्यों को आबंटित किया जाना चाहिए तथा यादृच्छिक ढ़ंग से आबंटित स्थितियों को प्रयोगात्मक समूह को दिया जाना चाहिए।

(ग) वाह्राय चर को स्वतन्त्र चर के रूप में बदलना (To convert the Extraneous variable into a independent variable) :– वाह्रा चरों को नियन्त्रित करने का एक तरीका यह भी है कि जिस वाहय चर को हमें नियन्त्रित करना है उसका हम अपने अध्ययन में शामिल कर लें। यदि आयु या बुद्धि हमारे अध्ययन में वाहय चर है तो हम इन चरों को भी अपने अध्ययन में शामिल कर लें। इन चरों (बुद्धि और आयु) का प्रभाव आश्रित चर पर देखेगे तथा इन चरों की आपस में अन्तक्रिया का प्रभाव क्या होगा ? यह भी अध्ययन किया जाएगा।

(घ) प्रयोज्यों को सुमेलित करना (Matching Cases) :– इस विधि में वाह्रा चरों को नियन्त्रित करने में ऐसे प्रयोज्यों को लिया जाता है जो एक समान विशेषताएं रखते हैं तथा इनमें से कुछ को प्रयोगात्मक समूह में तथा कुछ को नियन्त्रित समूह में रखा जाता है।

इस विधि की अपनी कुछ सीमाएं है जैसे एक से अधिक चरों के आधार पर प्रयोज्यों को सुमेलित करना एक कठिन कार्य है। बहुत से प्रयोज्यों को अध्ययन से अलग करना पड़ता है क्योंकि वह सुमेलित नहीं हो पाते ।

(ङ) समूहों को सुमेलित करना (Group Matching) :– इस विधि से वाह्य चरों को नियन्त्रित करने में प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह में प्रयोज्यों को इस प्रकार आबंटित किया जाता है कि जहां तक सम्भव होता है दोनों समूहों का मध्यमान तथा प्रसरण लगभगसमान हो।

(च) सह प्रसरण विश्लेषण (Analysis of covariance) :– वाहय चरों के आधार पर प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह में होने वाले प्रारम्भिक अन्तर को सांख्यिकीय विधि से दूर किया जाता है।

7.4.2 जोड़–तोड (Manipulation) :-

प्रयोगात्मक अनुसन्धान की प्रमुख विशेषता है – स्वतंत्र चर में जोड़–तोड़ करना। स्वतन्त्र चर में जोड़–तोड़ करके उसके प्रभाव को आश्रित चर पर देखा जाता है। स्वतन्त्र चर के उदाहरण है–आयु, सामाजिक–आर्थिक स्तर, कक्षा का वातावरण, व्यक्तित्व की विशेषता आदि। इनमें से कुछ चरों में शोधकर्ता के द्वारा परिवर्तन किया जा सकता है। जैसे–शिक्षण विधि तथा पढ़ाने का विषय आदि। कुछ चरों में सीधे परिवर्तन न करके चयन द्वारा परिवर्तन किया जाता है जैसे– आयु, बुद्धि, आदि। शोधकर्ता एक समय में एक या एक से अधिक स्वतन्त्र चरों में जोड़–तोड़ कर सकता है।

7.4.3 अवलोकन (Observation) :-

प्रयोगात्मक अनुसन्धान में स्वतन्त्र चर मे जोड़–तोड़ करके उसके प्रभाव को आश्रित चर पर देखा जाता है। आश्रित चर पर पड़ने वाले प्रभाव को सीधे नहीं देखा जा सकता। शैक्षिक उपलब्धि तथा अधिगम यदि आश्रित चर है तो इनको सीधे नहीं देखा जा सकता है। शैक्षिक उपलब्धि को परीक्षा में प्राप्त अंकों के अवलोकन के आधार पर देखा जाएगा।

7.4.4 पुनरावृत्ति (Replication) :-

प्रयोगात्मक अनुसन्धान में यदि सभी वाहय चरों को नियन्त्रित करने का प्रयास किया गया तथा प्रयोज्यों को आबंटन यादृच्छिक विधि से किया जाए तब भी ऐसे बहुत से कारक हो सकते हैं जो अध्ययन के परिणामों को प्रभावित कर सकते हैं। पुनरावृत्ति के द्वारा इस तरह के समस्या का समाधान किया जा सकता है । यदि किसी प्रयोग में 15–15 प्रयोज्य प्रयोगात्मक तथा नियन्त्रित समूह में है तथा उनका आबंटन यादृच्छिक विधि से किया गया है तो यह एक प्रयोग न होकर 15 समानान्तर प्रयोग होते हैं। प्रत्येक जोड़े को अपने आप में एक प्रयोग माना जाता है।

बोध प्रश्न –

1. वाहय चर से क्या तात्पर्य है ?

.....

.....

.....

.....

2. प्रयोगात्मक अनुसन्धान की विशेषताओं के नाम लिखिए।

.....

.....

.....

7.5 प्रयोगात्मक अभिकल्प :

जिस प्रकार कोई वास्तुकार किसी भवन के निर्माण के लिये पहले एक ब्लूप्रिन्ट तैयार करता है, उसी प्रकार एक शोधकर्ता शोध कार्य को सुचारू रूप से करने के लिए एक प्रयोगात्मक अभिकल्प (Research Design) तैयार करता है। प्रायोगिक अभिकल्प में उन चरों का वर्णन किया जाता है जिनका हमें अध्ययन करना होता है, चरों को मापने के लिए जिन उपकरणों का प्रयोग किया जाएगा उसका वर्णन किया जाता है, न्यादर्श जिसका हमें अध्ययन करना है उसका वर्णन किया जाता है, ऑकड़ों को इकट्ठा करने की विधि तथा आंकड़ो को विश्लेषित करने की सांख्यिकीय विधियों के बारे में बताया जाता है।

7.5.1 प्रयोगात्मक अभिकल्प प्रसरण नियन्त्रण प्रणाली के रूप में (Experimental Design as Variance Control Mechasnism) :-

शोध अभिकल्प को प्रसरण नियन्त्रण प्रणाली के रूप में देखा जाता है। इसमें प्रसरण को नियन्त्रित किया जाता है। प्रयोगात्मक प्रसरण (Experimental variance) या क्रमबद्ध प्रसरण (Systematic variance) को उच्चतम किया जाता है, त्रुटि प्रसरण (Error variance) को निम्नवत किया जाता है तथा वाहय चरों (Extraneous variables) का नियन्त्रण किया जाता है। प्रायोगात्मक अभिकल्प के द्वारा प्रसरण को नियन्त्रित करने के सांख्यिकीय सिद्धान्त को "अधिकतम–न्यूनतम–नियन्त्रण सिद्धान्त" (Principal of Max-Min-Con) कहा जा सकता है।

7.5.2 प्रयोगात्मक प्रसरण को अधिकतम करना (Maximize Experimental Variance) –

प्रयोगात्मक प्रसरण का अर्थ है– आश्रित चर में उत्पन्न प्रसरण जो कि शोधकर्ता द्वारा स्वतन्त्र चर मे जोड़–तोड़ करके किया जाता है। शोध अभिकल्प का तकनीकी उद्देश्य होता है कि प्रयोगात्मक प्रसरण को अधिकतम किया जाए।

शोध अभिकल्प ऐसा हो जिसमें जहां तक सम्भव हो प्रयोगात्मक अवस्थाएं (Experimental Conditions) एक दूसरे से अधिक से अधिक अन्तर रखती हों। प्रयोगात्मक अवस्थाएं जितनी अधिक से अधिक भिन्न होगी, आश्रित चर पर उतना ही अधिक प्रयोगात्मक प्रसरण देखा जा सकेगा।

7.5.3 त्रुटि प्रसरण को निम्नतम करना (Minimize Error Variance) -

प्रयोगात्मक अभिकल्प का उद्देश्य है त्रुटि प्रसरणको निम्नतम करना। किसीभी प्रयोग में त्रुटि प्रसरण को कम करने का प्रयास किया जाना चाहिए। त्रुटि प्रसरण वैसे प्रसरण को कहा जाता है जो शोध में ऐसे कारकों से उत्पन्न होता है जो शोधकर्ता के नियन्त्रण से बाहर होता है। व्यक्तिगत विभिन्नताओं के कारण त्रुटि प्रसरण होता है जो शोधकर्ता के नियन्त्रण से बाहर होता है।

त्रुटि प्रसरण का दूसरा कारक मापन त्रुटियों से सम्बन्धित होता है। ऐसे कारकों में एक प्रयास से दूसरे प्रयास में होने वाली अनुक्रियों में भिन्नता, प्रयोज्यों द्वारा अनुमान लगाना तथा थकान आदि है।

त्रुटि प्रसरण को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारक एक दूसरे से अन्तक्रिया करके एक–दूसरे से प्रभाव को समाप्त करने की प्रवृत्ति रखते हैं। इस प्रवृत्ति के कारण त्रुटि प्रसरण को आत्मपूरक (Self-Compensating) कहा जाता है। त्रुटि प्रसरण यादृच्छिक त्रुटियों पर आधारित होता है इसलिये यह अपूर्वकथनीय (Unpredictable) होता है।

त्रुटि प्रसरण को दो विधियों से कम किया जा सकता है।

(i) नियन्त्रित दशाओं में यदि प्रयोग किया जाए तो त्रुटि प्रसरण को कम किया जा सकता है।

(ii) मापन की विश्वसनीयता को बढ़ाकर त्रुटि प्रसरण को निम्नतम किय जा सकता है।

7.5.4 वाह्य चरों को नियन्त्रित करना (To Control Extraneous Variable) :-

वाह्य चरों का जहां तक सम्भव हो नियन्त्रण किया जाना चाहिये। वाह्य चरों का नियन्त्रण कई विधियों से किया जा सकता है, जैसे– विलोपन, यादृच्छिकीकरण, वाहय चर को स्वतन्त्र चर के रूप में बदलकर, प्रयोज्यो को सुमेलित करके, समूहों को सुमेलित करके तथा सह प्रसरण विश्लेषण।

7.6 एक अच्छे प्रायोगिक अभिकल्प की कसौटी :

7.6.1 उपयुक्तता (Appropriateness) –

प्रायोगिक अभिकल्प को उपयुक्त होना चाहिए तभी प्रयोग के विश्वसनीय परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं। प्रायोगिक अभिकल्प जटिल या सरल न होकर उपयुक्त होनी चाहिये। उपयुक्त अभिकल्प के चयन द्वारा शोधकर्ता अध्ययन की

आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए वस्तुनिष्ठ विधि से प्रयोगात्मक अवस्थाएं व्यवस्थित करता है।

7.6.2 पर्याप्त नियन्त्रण (Adequacy of Control) –

प्रायोगिक अभिकल्प ऐसा होना चाहिए जिसमें वाह्य चरों पर पर्याप्त नियन्त्रण किया जा सके। वाह्य चरों पर पर्याप्त नियन्त्रण से ही शोध के विश्वसनीय परिणाम प्राप्त किये जा सकते है। वाह्य चरों का नियन्त्रण कई विधि यों से किया जाता है परन्तु यादृच्छिकीकरण के द्वारा सभी वाह्य चरों का नियन्त्रण किया जा सकता है।

7.6.3 वैधता (Validity) –

किसी भी प्रायोगिक अभिकल्प के लिये तीसरी कसौटी है– वैधता। प्रायोगिक अभिकल्प को वैध होना चाहिए। वैधता दो प्रकार की होती है–आन्तरिक वैधता तथा वाहय वैधता।

7.6.4 आन्तरिक वैधता –

प्रयोगात्मक अनुसन्धान का उद्देश्य है कि स्वतन्त्र चर का प्रभाव आश्रित चर देखा जाए, इसके लिये सभी वाहय चरों पर नियन्त्रण किया जाए। किसी भी प्रयोगात्मक अभिकल्प में इस उद्देश्य को किस सीमा तक प्राप्त किया गया है, उसकी आन्तरिक वैधता को बताता है। आन्तरिक वैधता मूलरूप से नियन्त्रण की समस्या से सम्बन्धित है।

कैम्पबेल तथा स्टैनले के अनुसार आठ प्रकार के वाह्य चर किसी भी प्रायोगिक अभिकल्प की आन्तरिक वैधता को प्रभावित करते हैं।

(i) **इतिहास (History)** :- इतिहास का अर्थ है कुछ अप्रत्याशित घटनाएं जो प्रयोग के समय सकारात्मक रूप से या नकारात्मक रूप से आश्रित चर को प्रभावित करती हैं।

यदि किसी शिक्षक को प्रयोग के लिए प्रशिक्षित किया जाए लेकिन प्रयोग पूरा होने से पहले उसका स्थानान्तरण हो जाए तो प्रयोग का परिणाम प्रभावित होगा।

यदि किसी राजनीतिक कारण से अप्रत्याशित रूप से स्कूल बन्द हो जाए प्रयोग के बीच में या छात्रों के द्वारा हड़ताल कर दी जाए तो यह सभी कारण प्रयोग के पारिणाम को प्रभावित करेंगे । इन कारकों का प्रभाव भी आश्रित चर पर पड़ेगा।

(ii) **परिपक्वता (Maturity)** :- लम्बे समय तक चलने वाले प्रयोगों में यह देखा जाता है कि प्रयोग की अवधि में प्रयोज्यों में परिवर्तन, परिपक्वता की वजह से हो जाते हैं। उक्त सभी आश्रित चर में होने वाले परिवर्तन के कारण हो सकते हैं तथा प्रयोग के परिणाम को प्रभावित करते हैं।

यदि किसी प्रशिक्षण का प्रभाव हमें शैक्षिक उपलब्धि पर देखना है तथा प्रशिक्षण एव वर्ष का हो तो शैक्षिक उपलब्धि में होने वाला परिवर्तन केवल प्रशिक्षण का प्रभाव नही हो सकता। एक वर्ष में छात्रों की मानसिक योग्यता का विकास अधिक हो सकता है, उसके कारण भी शैक्षिक उपलब्धि बढ़ सकती है।

(iii) **पूर्व–परीक्षण (Pre-testing) :–** बहुत से प्रयोगात्मक अनुसन्धान में पूर्व – परीक्षण किये जाते हैं तथा फिर उपचार देने के बाद (स्वतन्त्र चर में जोड़–तोड़ करने के बाद) उसी परीक्षण को उन्हीं प्रयोज्यों पर पुनः प्रशासित किया जाता है। सामान्य रूप से यह देखने को मिलता है कि पूर्व–परीक्षण अभ्यास का कार्य करता है। पश्च–परीक्षण में जो प्राप्तांक आते है वह केवल उपचार के कारण न होकर पूर्व–परीक्षण का अभ्यास के रूप में कार्य करने के कारण भी हो सकता है तथा आन्तरिक वैधता को प्रभावित करते हैं।

(iv) **मापन त्रुटि (Measurement Error) :–** किसी चर का मापन करने के लिए विभिन्न प्रकार के उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। यदि प्रयोग मे लाए गये उपकरण विश्वसनीय नहीं है तो प्रयोग की आन्तरिक वैधता प्रभावित होती है।

शोधकर्ता यदि उपकरण का सही तरीके से प्रयोग नहीं कर पाता तथा यदि परीक्षण को प्रशासित करने के लिए प्रशिक्षण नहीं दिया गया तो चर के मापन में त्रुटि हो सकती है।

(v) **सांख्यिकीय प्रतिगमन (Statistical Regression) :–** कुछ प्रयोगों में पूर्व–परीक्षण तथा पश्च–परीक्षण दोनों करना आवश्यक होता है। यदि शोधकर्ता किसी ऐसे प्रयोज्य का चयन कर लेता है जो अपने गुणों में या तो अति श्रेष्ठ है या निकृष्ट (Extreme cases) तो सामान्य रूप से ऐसा देखा जाता है कि जो प्रयोज्य पूर्व –परीक्षण पर निम्न अंक प्राप्त करते हैं वह पश्च–परीक्षण पर उच्च अंक प्राप्त करते है। जो प्रयोज्य पूर्व–परीक्षण पर उच्च अंक प्राप्त करते हैं वह पश्चर्य–परीक्षण पर निम्न अंक प्राप्त करते हैं इसे ही सांख्यिकीय प्रतिगमन कहते हैं। पश्च–परीक्षण पर प्राप्त अंक उपचार के कारण न होकर सांख्यिकीय प्रतिगमन के कारण हो सकते है। इस घटना से प्रयोग की आन्तरिक वैधता प्रभावित होती है।

(vi) **प्रायोगिक नश्वरता (Experimental Martality) :–** जो प्रयोग लम्बे समय तक चलते है उनमें सामान्य रूप से यह देखा जाता है कि प्रयोग की अवधि में ही कुछ प्रयोज्यों की अनुपलब्धता हो जाती है। प्रयोगकर्ता प्रायोगिक समूह तथा नियन्त्रित समूह में यादृच्छिकीकरण विधि से प्रयोज्यों को आबंटित करता है लेकिन बीच में कुछ प्रयोज्यों को छोड़ देने से प्रयोग के अन्तिम परिणाम प्रभावित होते हैं।

(vii) **चयन पूर्वाग्रह (Selection Bias)** :– न्यादर्श को जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करना चाहिए। यादृच्छिक न्यादर्श प्रविधियों के प्रयोग से ऐसा न्यादर्श चुना जा सकता है। यदि शोधकर्ता ने यादृच्छिक विधि से न्यादर्श चयन नही किया है या प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह को समतुल्य नहीं बनाया गया तो न्यादर्श का चयन सही नहीं होगा। इस कारण सही परिणाम नहीं प्राप्त हो सकेंगे।

(viii) **चयन तथा परिपक्वता की अन्तःक्रिया (Interaction Effect)** :– न्यादर्श का चयन तथा परिपक्वता का प्रभाव प्रयोग की आन्तरिक वैधता को प्रभावित करता है लेकिन इन दोनों की अन्तर्क्रिया का प्रभाव भी आन्तरिक वैधता पर पड़ता है। इस तरह की अन्तर्क्रिया का प्रभाव उस स्थिति में पड़ता है जब उपचार को यादृच्छिक ढंग से न आंबटित करके प्रयोज्य स्वयं किसी एक प्रकार के उपचार का चयन कर लेते हैं। किसी विशेष प्रकार के उपचार के चयन का कारण आश्रित चर को प्रभावित कर सकता है।

यदि दो विधियों से किसी एक प्रकरण को पढ़ाया जाए तथा इन विधियों की प्रभावशीलता का अध्यन किया जाए, तथा समूह का चयन ऐसे किया कि एक समूह में अधिक परिपक्व प्रयोज्य हो तो दोनों विधियों की प्रभावशीलता का सही आंकलन नहीं किया जा सकता।

(ख) वाहय वैधता (External validity) :– किसी भी प्रयोगके परिणामों को कितनी अधिक जनसंख्या में सामान्यीकृत किया जा सकता है यह उस प्रयोग की वाहय वैधता होती है। परिणामों को जितनी अधिक जनंसख्या पर सामान्यीकृत किया जा सकता है उस प्रयोग की वाहय वैधता उतनी ही अधिक होती है। वाहय वैधता को निम्नलिखित कारक प्रभावित करते हैं।

(i) **पूर्व–उपचार (Pre- treatment)** :– जब एक ही समूह नियन्त्रित तथा प्रयोगात्मक दोनों रूपों में कार्य करता है तो पूर्व–उपचार का प्रभाव वाहय वैधता पर पड़ता है। एक ही समूह को बारी–बारी से नियन्त्रित समूह तथा प्रयोगात्मक समूह बनाया जाता है तो पूर्व–उपचार के प्रभाव को पूरी तरह से समाप्त नहीं किया जा सकता। इस स्थिति में उन प्रयोज्यों पर परिणामों को सामान्यीकृत नहीं किया जा सकता जिन पर पूर्व उपचार नहीं किया गया है।

(ii) **प्रयोग की कृत्रिम परिस्थिति (Artificiality of Experimental Setting)**:– प्रयोगशाला अनुसन्धान (Laboratory Experiment) में लगभग सभी वाहय चरों को नियन्त्रित करने का प्रयास किया जाता है और यही नियन्त्रण प्रयोग को कृत्रिम बनाता है। वास्तविक जीवन की स्थितियों में इस प्रकार की कृत्रिमता नहीं होती और न ही यह सम्भव है कि कृत्रिम स्थितियों को उत्पन्न किया जा सके। इसी कारण इन कृत्रिम परिस्थितियों में किए गये अनुसन्धान के परिणामों को सामान्यीकृत

करने की बहुत सीमाएं होती है। इन परिस्थितियों में किए गये अनुसन्धानों की वाहय वैधता बहुत कम होती है।

7.7 प्रायोगिक अभिकल्प के प्रकार :

प्रायोगिक अभिकल्प विभिन्न प्रकार के होते हैं। इनमें अन्तर उनकी जटिलता तथा नियन्त्रण की पर्याप्तता का होता है। किसी भी प्रायोगिक अभिकल्प का चुनाव कुछ कारकों पर निर्भर करता है जैसे – प्रयोग के उद्देश्य तथा प्रकृति में, चरों के प्रकार पर जिन्हें संचालित(Monipulates) करना है, प्रयोग की सुविधा तथा प्रयोग की परिस्थितियों पर तथा शोधकर्ता की कार्यकुशलता पर। अभिकल्प रचना में सामान्यतः समूह के अक्षर G से, RG यादृच्छिक चयनित समूह, MG समेल समूह, T उपचार, C नियन्त्रण तथा O प्रेक्षण या निरीक्षण के लिये उपुयक्त किये जाते हैं।

प्रायोगिक अभिकल्प को मुख्य रूप से तीन भागों में वर्गीकृत किया जाता है–

(1) पूर्व–प्रायोगिक अभिकल्प (Pre-experimental design)

(2) अर्ध प्रयोगिक अभिकल्प (Quasi-experimental design)

(3) वास्तविक प्रायोगिक अभिकल्प (True-experimental design)

7.7.1 पूर्व–प्रायोगिक अभिकल्प (Pre-experimental design)

पूर्व प्रायोगिक अभिकल्प में वाहय चरों पर नियन्त्रण बहुत कम या बिल्कुल नहीं होता है। इसमें या तो नियन्त्रित समूह होता ही नही है और यदि होता भी है तो नियन्त्रित तथा प्रायोगिक समूह को समतुल्य नही बनाया जाता है । इस प्रकार के अभिकल्प सबसे कम प्रभावशाली होते हैं। यह तीन प्रकार के अभिकल्प होते हैं।

(i) **एकल प्रयास अध्ययन (One shot case study)** :- इस प्रकार के अभिकल्प में शोधकर्ता द्वारा एक समूह का चयन किया जाता है तथा उसको उपचार दिया जाता है तथा उस समूह पर पश्च–परीक्षण किया जाता है तथा परिणाम को उपचार का कारण माना जाता है । इस अभिकल्प से प्राप्त परिणामों को सामान्यीकृत नहीं किया जा सकता है तथा इसमें आन्तरिक वैधता की कमी पायी जाती है।

G : TO

(ii) **एकल समूह पूर्व परीक्षण–पश्च परीक्षण अभिकल्प (The Single group Pre-test treatment Post-test design)** :- इस प्रकार के अभिकल्प में एक समूह का चयन किया जाता है उस पर पूर्व परीक्षण किया जाता है तथा आश्रित चर का मापन किया जाता है। इसके बाद उस समूह को उपचार (Treatment) दिया जाता है। उपचार के बाद पश्च–परीक्षण किया जाता है तथा

फिर से आश्रित चर का मापन किया जाता है। पूर्व–परीक्षण के बाद तथा पश्च–परीक्षण के बाद आश्रित चर के मानों के अन्तर को उपचार का प्रभाव माना जाता है।

इस अभिकल्प में वाहय चरों पर कोई नियन्त्रण नहीं किया जाता तथा इनमें कोई नियन्त्रित समूह नही होता है इसलिए प्रयोगात्मक अनुसन्धान की दूसरी शर्त कि यदि "कारण नही है तो प्रभाव भी नहीं" को सत्यापित नहीं किया जा सकता।

G : पूर्व परीक्षण O
G : T पश्च परीक्षण O

(iii) **स्थिर समूह अभिकल्प (Static group comparision)** :- इस प्रकार के अभिकल्प में दो समूहों का चयन किया जाता है तथा एक समूह को उपचार दिया जाता है तथा दूसरे समूह को किसी भी प्रकार का उपचार नहीं दिया जाता है। पश्च–परीक्षण दोनो समूहों का किया जाता है। दोनो समूहों के पश्च–परीक्षण के परिणामों में अन्तर उपचार का प्रभाव होता है, ऐसा माना जाता है।

यद्यपि इस अभिकल्प में एक नियन्त्रित समूह होता है लेकिन नियन्त्रित तथा प्रयोगात्मक समूह को समतुल्य नहीं बनाया जाता। यदि दोनों समूह में शुरू से ही आश्रित चर पर अन्तर होता है तो पश्च–परीक्षण के परिणामों में अन्तर को पूरी तरह से उपचार का प्रभाव नहीं माना जा सकता। इस प्रकार के अभिकल्प में आन्तरिक वैधता की कमी पायी जाती है।

G_1 : P_{RT} T O P_{OT}
G_2 : P_{RT} T O P_{OT}

7.7.2 प्रयोगिक कल्प अभिकल्प (Quasi-experimental design)

प्रायोगिक कल्प अभिकल्प में जहां तक सम्भव होता है वाहय चरों को नियन्त्रित किया जाता है। प्रयोग में दो समूह होते हैं प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह, लेकिन प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूहों में प्रयोज्यों का आबंटन यादृच्छिक तरीके से न हो पाने के कारण दोनों समूहों को समतुल्य नहीं बनाया जा पाता। बहुत सी ऐसी परिस्थितियां होती है जब यादृच्छिकीकरण से न्यादर्श का चयन नहीं हो सकता तथा यादृच्छिक आबंटन की अनुमति भी नहीं मिल पाती। इन परिस्थितियों में केवल प्रयोगिक कल्प अभिकल्प का ही प्रयोग किया जा सकता है।

(i) **असमतुल्य पूर्व परीक्षण–पश्च परीक्षण अभिकल्प (Non Equivalent Pretest -Posttest design)** :- कभी –कभी व्यवहारिक रूप से यह सम्भव नहीं होता है कि स्कूलों में या किसी स्कूल के दो वर्गो में यादृच्छिक आबंटन द्वारा दो समूह का निर्माण किया जा सके। इन परिस्थितियों में स्कूलों को या किसी एक स्कूल के दो वर्गों को यादृच्छिक रूप से एक स्कूल या एक वर्ग को प्रयोगात्मक समूह या दूसरे स्कूल या दूसरे वर्ग को नियन्त्रित समूह मान लिया जाता है।

पूर्व–परीक्षण दोनों समूहों का किया जाता है जबकि उपचार केवल प्रायोगिक समूह को दिया जाता है। पश्च–परीक्षण दोनों समूहों का किया जाता है। प्रयोगात्मक समूह के पूर्व–परीक्षण तथा पश्च–परीक्षण के बीच अन्तर ज्ञात किया जाता है तथा इसी प्रकार नियन्त्रित समूह के पूर्व–परीक्षण तथा पश्च–परीक्षण के अन्तर को ज्ञात किया जाता है। यदि इन दोनों के बीच का अन्तर सार्थक होता है तो यह निष्कर्ष निकलता है कि उपचार प्रभावी है।

जब यादृच्छिक आबंटन सम्भव नहीं होता है तब इस अभिकल्प का प्रयोग किया जाता है। इस अभिकल्प की सबसे बड़ी सीमा यह है कि यदि दोनो समूहों में पूर्व–परीक्षण में आश्रित चर के मान में कोई अन्तर नहीं आता है तब तो ठीक है लेकिन यदि प्रारम्भिक अवस्था में दोनों समूहों में अन्तर आता है तो हम इस अन्तर को सांख्यिकीय रूप से सह प्रसरण विश्लेषण प्रविधि के द्वारा नियन्त्रित करने का प्रयास करते है।

(ii) **प्रति सन्तुलित अभिकल्प (Counter Balanced Design)** :- जब हम समूहों को यादृच्छिक रूप से आबंटित नही कर सकते है तथा हमें दो या तीन प्रकार के उपचार देने होते हैं तो इस प्रकार के अभिकल्प का प्रयोग किया जाता है। इस अभिकल्प में सभी समूहों को सभी तरह के उपचार यादृच्छिक रूप से दिये जाते है। प्रत्येक समूह को प्रत्येक तरह का उपचार क्रम बदल–बदल कर दिया जाता है। प्रयोग के शुरूआत में सभी समूहों पर पूर्व–परीक्षण किया जाता है तथा प्रत्येक समय अन्तराल के बाद पश्च–परीक्षण किया जाता है तथा अन्त में एक पश्च –परीक्षण सभी समूहों का किया जाता है।

Time Sequence

Group		1st	2nd	3rd	4th	P
A	PrT	T_1	T_2	T_3	T_4	P_0T_5
B	PrT	T_3	T_4	T_2	T_1	P_0T_5
C	PrT	T_2	T_1	T_4	T_3	P_0T_5
D	PrT	T_4	T_3	T_1	T_2	P_0T_5

यदि चार प्रकार के उपचार है तो हमें चार समूह लेगे। इस अभिकल्प में उपचारों की संख्या तथा समूहों की संख्या को संतुलित किया जाता है इसलिये इसे प्रतिसंतुलित अभिकल्प कहा जाता है। इस अभिकल्प में उच्च कोटि की आन्तरिक वैधता होती है।

7.7.3 वास्तविक प्रायोगिक अभिकल्प (True-experimental design)

वास्तविक प्रायोगिक अभिकल्प में प्रायोगिक समूह तथा नियन्त्रित समूह को यादृच्छिक आबंटन के द्वारा समतुल्य बनाया जाता है। इसी कारण इस अभिकल्प में आन्तरिक वैधता के सभी कारकों को नियन्त्रित किया जाता है। वास्तविक जीवन की परिस्थितियों में वास्तविक प्रायोगिक अभिकल्प का प्रयोग एक कठिन कार्य है क्योंकि इन परिस्थितियों में सभी चरों का नियन्त्रण सम्भव

नहीं होता तथा यादृच्छिक आबंटन भी सम्भव नहीं हो पाता। इस अभिकल्प का प्रयोग एक कठिन कार्य है लेकिन जहाँ तक सम्भव हो इसी प्रकार के अभिकल्प का प्रयोग किया जाना चाहिए क्योंकि इसमें प्रयोगात्मक अनुसन्धान के सभी सिद्धान्तों का पालन किया जाता है।

वास्तविक प्रयोगिक अभिकल्प कई प्रकार के होते हैं :–

(i) **केवल पश्च समतुल्य समूह अभिकल्प (The Post test only, Equivalent Groups Design)** :- इस अभिकल्प में यादृच्छिक आबंटन के द्वारा दो समतुल्य समूह बनाए जाते हैं। किसी एक समूह को यादृच्छिक रूप से उपचार दिया जाता है तथा उसे प्रायोगिक समूह मान लिया जाता है तथा दूसरे समूह को नियन्त्रित समूह मान लिया जाता है। उपचार केवल प्रायोगिक समूह को दिया जाता है लेकिन आश्रित चर का मापान दोनों समूहों के लिये किया जाता है। दोनों समूहों में आने वाला अन्तर उपचार का प्रभाव माना जाता है। इस अभिकल्प में समूहों का निर्माण यादृच्छिक आबंटन के द्वारा होता है इसलिये इन दोनों समूहों में समतुल्यता होती है। इस कारण आश्रित चर में आने वाला अन्तर उपचार का प्रभाव ही माना जाता है।

$$\begin{array}{|l} Gr_1\ (E_R)\ T\ P_{OT} \\ Gr_2\ (C_R)\ P_{OT} \end{array}$$

(ii) **पूर्व परीक्षण पश्च समतुल्य समूह अभिकल्प (The Pre-test - Post Test Equivalent Groups Design)** :- यह अभिकल्प पहले वाले अभिकल्प से केवल इसमें अन्तर रखता है कि इसमें पूर्व परीक्षण भी किया जाता है। इस अभिकल्प में यादृच्छिक आबंटन के द्वारा प्रायोगिक समूह तथा नियन्त्रित समूह में प्रयोज्यों को रखा जाता है तथा दोनों समूहों का पूर्व–परीक्षण किया जाता है। इसके बाद शोधकर्ता केवल प्रायोगिक समूह को उपचार देता है। प्रयोग के अन्त में दोनों समूहों पर पश्च–परीक्षण किया जाता है । आश्रित चर का मापन किया जाता है। पूर्व–परीक्षण तथा पश्च–परीक्षण के बीच आने वाले अन्तर को उपयुक्त सांख्यिकीय प्रविधियों के द्वारा ज्ञात किया जाता है। यदि दोनों के बीच सार्थक अन्तर आता है तो इसे उपचार का प्रभाव माना जाता है।

$$\begin{array}{|l} Gr_1\ (E_R)\ Pr_T\ T\ P_{OT} \\ Gr_2\ (C_R)\ Pr_T\ -\ P_{OT} \end{array}$$

(iii) **सोलोमन चार समूह अभिकल्प (Soloman Four Groups Design)** :- कभी–कभी पूर्व परीक्षण का प्रभाव उपचार के प्रभाव को प्रभावित करता है। पूर्व–परीक्षण के प्रभाव को ज्ञात करने के लिये इस अभिकल्प का प्रयोग किया जाता है। इस अभिकल्प में चार समूह होते हैं। दो प्रायोगिक समूह होते है जिसमें एक पर पूर्व–परीक्षण किया जाता है तथा दूसरे समूह पर कोई पूर्व परीक्षण नहीं किया जाता है। इसी प्रकार दो नियन्त्रित समूह होते है एक में पूर्व–परीक्षण किया जाता है तथा दूसरे में कोई पूर्व–परीक्षण नहीं किया जाता है। इन सभी समूहों में प्रयोज्यों की आबंटन यादृच्छिक विधि से किया जाता है। पश्च परीक्षण चारों

समूहों पर किया जाता है।

Gr_1	E_R	$P_r T_1$	T	$P_0 T_1$
Gr_2	C_R	$P_r T_2$	–	$P_0 T_2$
Gr_3	E_R	–	T	$P_0 T_3$
Gr_4	C_R	–	–	$P_0 T_4$

बोध प्रश्न : –

1. प्रयोगात्मक अभिकल्प का क्या तात्पर्य है ?

.....

.....

.....

.....

2. एक अच्छे प्रायोगिक अभिकल्प की तीन कसौटियों के नाम लिखिये ।

.....

.....

.....

7.8 अभ्यास प्रश्न

प्र0 – प्रयोगात्मक अनुसन्धान से आप क्या समझते हैं ?

प्र0– प्रयोगात्मक अनुसन्धान के चर को स्पष्ट कीजिए।

प्र0– प्रयोगात्मक अनुसन्धान की विशेषताएं बताइये ।

प्र0– प्रयोगात्मक अभिकल्प के रूप को स्पष्ट कीजिए।

प्र0– प्रायोगिक अभिकल्प की कसौटी की व्याख्या कीजिए।

प्र0– प्रायोगिक अभिकल्प के प्रकार को बताइये।

7.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

बेस्ट, जॉन डब्लू : रिसर्च इन एजूकेशन, इन्गलवुड विलफ, एन0जे0, प्रिन्टिस हाल, 1997।

सिंह, अरूण कुमार : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2007।

कौल, लोकेश : शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0, 2005।

भटनागर, आर0पी0 : शिक्षा अनुसन्धान, लायल बुक डिपो, मेरठ, 2003।

राय, पारसनाथ : अनुसंधान परिचय, नवरंग ऑफसेट प्रिन्टर्स, आगरा, 2002 ।

गुप्ता, एस0पी0 : आधुनिक मापन और मूल्यांकंन, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2010।